Postal Regn. - RTK/010/2023-25
RNI - HRHIN/2003/10425

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र

अप्रैल2024 (प्रथम)

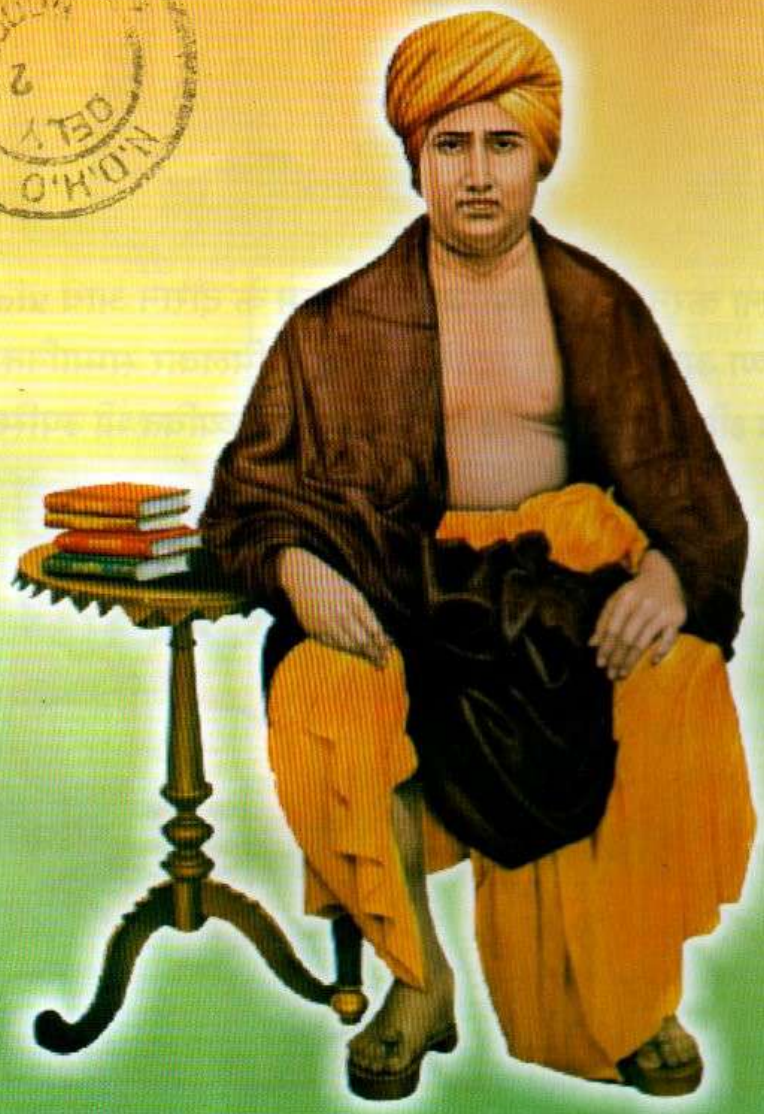

Email : aryapsharyana@yahoo.in

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

Visit us : www.apsharyana.org

आर्यसमाज घरौंडा जिला करनाल में आयोजित कार्यक्रम के दौरान आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के प्रधान सेठ राधाकृष्ण आर्य जी का पदाधिकारियों ने मिलकर सम्मानित किया तथा साथ में अन्तरंग सभा के सदस्य श्री वीरेन्द्र पाढा एवं अनेक गणमान्य व्यक्ति भी उपस्थित थे।

आर्यसमाज घोगड़ीपुर जिला करनाल में आयोजित कार्यक्रम में आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के यशस्वी प्रधान सेठ राधाकृष्ण आर्य जी ने मुख्य अतिथि के रूप में शिरकत की और इस दौरान उपस्थित सदस्यों ने उनके साथ मिलकर वेदप्रचार कार्यक्रम को गति देने के लिए विचार-विमर्श किया।

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,125
विक्रम संवत् 2081
दयानन्दाब्द 201

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
की
मुख-पत्रिका

वर्ष 20 अंक 5

सम्पादक :
उमेद सिंह शर्मा

पत्रिका-शुल्क
देश में
वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये
विदेश में
वार्षिक शुल्क 100 डॉलर
आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,
गोहाना रोड, रोहतक-124001

सह-सम्पादक
आचार्य सोमदेव

सम्पादकीय विभाग
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक
सम्पर्क सूत्र-
चलभाष :-
मो० 89013 87993

॥ ओ३म् ॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

अप्रैल, 2024 (प्रथम)
1 से 15 अप्रैल, 2024 तक

इस अंक में....

1. सम्पादकीय–वेद-प्रवचन 2
2. (1) ईश्वर पर अविश्वास के कारण 3
3. स्वास्थ्य चर्चा–लहसुन के अनेक लाभ 4
4. आर्यसमाज स्थापना दिवस 5
5. महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का आर्य हो अभिप्राय- मानव की आत्मा में देवत्व जगाने का बीजारोपण करना 7
6. सत्य कड़वा–झूठ सफेद क्यों? 8
7. ऋषि दयानन्द न आते तो आर्य जाति की आध्यात्मिक एवं सामाजिक उन्नति न होती 9
8. कम आनन्ददायक नहीं होती हमारी सहज स्वीकार्यता भी 11
9. भजन–ईश्वरभक्त महान् बनो 12
10. मूर्ति क्यों तोड़ दी? 13
11. अमर हुतात्मा भक्त फूलसिंह जी 15
12. समाचार-प्रभाग व शेषभाग

आर्य प्रतिनिधि पाक्षिक पत्रिका के प्रसार में सहयोग दें

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने योग्य पत्रिका है। यदि आप इसके पाठक बनेंगे तो हमें विश्वास है कि पसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे अन्य लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करके ऋषि ऋण से अनृण होवें।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2000/- रुपये है।

आप उपरोक्त राशि 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' दयानन्दमठ रोहतक के नाम से बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भिजवाकर सदस्य बन सकते हैं।

–सम्पादक

सम्पादकीय...

वेद-प्रवचन

❑ संकलन-उमेद शर्मा, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक

गतांक से आगे....

महान्तं त्वा महीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः।
यद् गोभिर्वासयिष्यसे॥ ऋग्वेद 9.2.4

हे सोम! तुझ में दूध मिलाया जाएगा। तब तू पूरा हव्य पदार्थ बनेगा।

आ धावता सुहस्त्यः शुक्रा गृभ्णीत मन्थिना।
गोभिः श्रीणीत मत्सरम्॥ ऋग्वेद 9.64.4

हे ऋत्विज लोगो! आओ, सोम पात्रों को लाओ और सोम में दूध मिलाओ।

प्र ण इन्दो महे रण आपो अर्षन्ति सिन्धवः।
यद् गोभिर्वासयिष्यसे॥ ऋग्वेद 9.66.13

हे सोम! तुम हमारे बड़े यज्ञ के लिए तैयार किये जा रहे हो। तुम में दूध मिलाया जाएगा।

यहाँ 'गोभिः' तृतीयान्त या करणकारक है-"गौओं के साथ।" सायणाचार्य आदि भाष्यकारों ने 'गोभि' का अर्थ लिया है 'गो-विकारे' अर्थात् गाय से उत्पन्न होने वाले दूध, दही, घी आदि। सम्भव है कि किसी ने अज्ञानवश या भ्रान्तिवश या किसी दुष्ट के बहकावे से 'गोभिः' का सीधा अर्थ 'गायों द्वारा' ले लिया हो, परन्तु यह अर्थ प्रसंग से बाहर है। इसी प्रकार वेद में कई स्थानों पर 'गो' का अर्थ गोविकार लिया गया है (देखें हमारी पुस्तक 'सायण और दयानन्द' पृष्ठ 164-165)।

हमने यहाँ 'गो' अर्थ 'गोवर्ग' लिया है अर्थात् वे सब पशु जिनसे हमको दूध की प्राप्ति होती है, सब प्रकार की गायें, भैंसें, बकरियाँ आदि। यों तो 'गच्छतीति गौः' शब्द हर प्रकार के पशु का वाचक हो सकता है परन्तु इस मन्त्र में 'गाय' के सम्बन्ध में कई विशेषताओं का उल्लेख है, जैसे 'दुबले को मोटा करना या श्रीरहित को श्रीयुक्त करना' इससे स्पष्ट है कि यहाँ गाय का अर्थ है सब दूध देने वाले पशु जिनको मनुष्य दूध के लिए पालता है। ऋषि दयानन्द ने अपनी पुस्तक 'गोकरुणानिधि' में गाय, बकरी आदि सभी दूध देने वाले पशुओं के विषय में लिखा है, जो गोरक्षक लोग अपने कार्यक्षेत्र को गौओं तक ही सीमित रखते हैं, वे साम्प्रदायिकता की दलदल में फँसकर अपने उद्देश्य को भुला देते हैं। जब गोरक्षा का आन्दोलन छिड़ता है, तब बकरी और भैंस की उपेक्षा की जाती है। जो लोग गोभक्त कहे जाते हैं, वे भी भैंसों और बकरियों को मारकर खाना पाप नहीं समझते। इससे न गोरक्षा ही हो पाती है, न अहिंसा का ही प्रचार होता है। जब तक लोग बकरियों को मारकर खाते रहेंगे गोरक्षा नहीं हो सकेगी और न मानवजाति का कल्याण होगा। जो लोग भैंस पाल सकते हैं, वे भैंस पालें, जो गाय पाल सकते हैं, वे गाय पालें और जो कम सामर्थ्यवाले हैं वे बकरियाँ पालें तो दूध का आधिक्य हो जाए। प्रायः देखा गया है कि मांसाहारी लोग दुग्धाहारी नहीं होते, अतः जहाँ बकरियों का मांस खाने की अधिक प्रथा है वहाँ दूध की उपेक्षा की जाती है और इसलिए गाय की भी। जो लोग भ्रान्तिवश ऐसा समझते हैं कि केवल गाय की पूंछ पकड़ने से वैतरणी पार करके स्वर्ग को पहुँच जायेंगे वे गोवर्ग के वास्तविक मूल्य को नहीं समझ पाते, अतः एक बहुमूल्य संस्थान साम्प्रदायिक बन गया है।

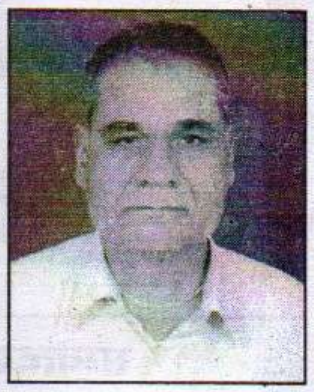

प्रायः वनस्पति घी (डालडा आदि) के पक्षपातियों का कहना है कि देश में दूध इतना कम होता है कि मनुष्य के जीवन के लिए स्निग्ध पदार्थों की पूर्ति के लिए कृत्रिम घी की आवश्यकता है। यह दूध का अभाव भी मांसाहार के प्रचार के कारण है। आज लाखों बकरियाँ नित्य मारी जाती हैं। यदि बकरियों को मारा न जाए तो इनका दूध बहुत बड़ी सीमा तक दूध की आवश्यकता को पूरा कर सकता है और जैसे बैल बोझा ढोते हैं, इसी प्रकार बकरों का भी प्रयोग हो सकता है। परन्तु मांसाहारियों की प्रवृत्ति उस ओर जा ही नहीं सकती। इसीलिए हमारे घरों को 'भद्रता' का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता। भद्रता वहाँ है जहाँ सद्भावना है, प्रेम है,

शेष पृष्ठ 16 पर....

(1) ईश्वर पर अविश्वास के कारण

❑ संकलन–कन्हैयालाल आर्य, संरक्षक–आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

(1) क्या कारण है कि अपराधी नहीं, अपितु कभी-कभी निर्दोष और निरपराधी दण्डित होते हैं?

प्रश्न–आज समाज में ऐसा हो रहा है कि हत्यारे तो पकड़े नहीं जाते, परन्तु निर्दोष और निरपराधी दण्डित हो जाते हैं। ये बातें सुन-देखकर लगता है कि ईश्वर का न तो कोई अस्तित्व है और न ही कोई न्याय-व्यवस्था?

उत्तर–मैं यह जानता हूँ कि कई बार ऐसा होता है कि निर्दोष व्यक्ति फँस जाता है और दोषी मुक्त हो जाता है। फँसने वाला व्यक्ति आज की तिथि में निर्दोष है, परन्तु मेरा मानना यह है कि उसने कभी न कभी अपराध किया अवश्य होगा और यह उसका फल है। एक दृष्टान्त प्रस्तुत है–

एक बार की बात है कि हत्या का एक मुकदमा किसी न्यायाधीश की कचहरी में आया। सारे सदस्यों और वकीलों की दलीलों के आधार पर न्यायाधीश ने आरोपी को मृत्युदण्ड सुना दिया। मृत्युदण्ड की सजा सुनकर वह आरोपी खिलखिलाकर हँसने लगा। वह इतने जोर-जोर से हँसने लगा कि आसपास खड़े लोग तथा न्यायाधीश महोदय भी चकित ही रहे थे। सभी लोगों ने यह धारणा बना ली थी कि सम्भवत: मृत्युदण्ड की सजा सुनकर यह व्यक्ति पागल हो गया है और उसी पागलपन में यह जोर-जोर से हँस रहा है। काफी देर हँसने के पश्चात् वह व्यक्ति मौन हुआ और गम्भीर होकर न्यायाधीश महोदय से कहने लगा, "श्रीमान् जी! आपने मुझे दण्ड तो दे दिया है, उसे तो आप वापिस ले नहीं सकते, परन्तु मेरी प्रार्थना है कि मेरे बयान रिकॉर्ड किये जायें क्योंकि मुझे उस अपराध का दण्ड मिला है जो मैंने किया ही नहीं, परन्तु एक अपराध जो मैंने 40 वर्ष पूर्व किया था, उसका दण्ड मुझे लगता है आज मिल रहा है, अत: मेरे बयानों को इसलिए रिकॉर्ड किया जाये ताकि आने वाली पीढ़ियाँ पापकर्म से बच सकें।" न्यायाधीश महोदय उस व्यक्ति की इस प्रकार की स्वीकारोक्ति से बहुत प्रभावित हुए और उसे अपने बयान देने की आज्ञा प्रदान कर दी।

उस आरोपी व्यक्ति ने कहा, "श्रीमान् जी! यह कहानी आज की नहीं है बल्कि 40 वर्ष पूर्व की है। मैं एक

किसान था। मैं अपने खेत में बने छोटे से मकान में रहता था। मेरा विवाह नहीं हुआ था। मैं यदा-कदा रात्रि में उस छोटे से मकान में रह जाता था। उन्हीं दिनों एक यात्री मेरे खेत के निकट से गुजर रहा था, रात्रि अंधेरी थी, वर्षा होने की पूरी सम्भावना थी। उन दिनों यातायात के इतने अच्छे साधन नहीं थे। उस यात्री ने सोचा कि इस अंधेरी रात्रि में अगले ग्राम तक पहुँचना कठिन है। अत: उसने आकर मेरे मकान का द्वार खटखटाया। मैंने ज्योंही द्वार खोला तो एक ऐसे व्यक्ति को सामने देखा जो वेशभूषा तथा पहरावे से मुझे सम्पन्न लगा। मैंने उस व्यक्ति से पूछा, "श्रीमान् जी! आप को किससे मिलना है?" यात्री ने उत्तर दिया, "मुझे किसी से मिलना नहीं है, बल्कि मुझे अमुक स्थान पर जाना है, रात्रि आरम्भ हो गई है, अंधेरा बहुत है। मुझे लगता है कि मैं ऐसी स्थिति में अगले ग्राम तक नहीं पहुँच पाऊँगा। अत: मैंने आपके मकान में हल्का प्रकाश देखकर सोचा कि क्यों न रात्रि यहाँ व्यतीत कर ली जाये। यदि आप अनुमति दें तो मैं आज की रात्रि आपके इस मकान में व्यतीत कर लूँ। प्रात: होते ही मैं यहाँ से प्रस्थान कर जाऊँगा। मैंने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी और उसके लिए बिस्तर बिछा दिया। एक गिलास दूध जो मेरे पास बचा हुआ था, मैंने उसे पिला दिया। दूध पीकर उसने मेरा धन्यवाद किया और वह यात्री कुछ ही देर में निद्रा देवी की गोद में चला गया। कुछ देर के पश्चात् मैंने उसकी करवट बदलने की आवाज को सुना। वह बार-बार करवट बदल रहा था और अपने सिरहाने की पोटली पर हाथ लगा रहा था, इधर मुझे भी उसकी इस प्रक्रिया से नींद नहीं आ रही थी। चाहे वह यात्री आंखें बन्द किये हुए था, परन्तु उसकी बेचैनी उसके बार-बार करवट बदलने से और हाथ से अपनी पोटली को टटोलने से मुझे कुछ संदेह हुआ कि इसके पास कोई बहुत महंगी वस्तु है जिसे बार-बार वह देखने का प्रयास कर रहा है।" क्रमश: अगले अंक में....

स्वास्थ्य-चर्चा

लहसुन के अनेक लाभ

गतांक से आगे....

कच्चे लहसुन में दुर्गन्ध अधिक आ सकती है। यदि उसे घृतादि के साथ पका लिया जाये तो वह गन्ध बहुत कम या नष्ट हो जाती है किन्तु कच्चे लहसुन के सेवन से जो लाभ उठाया जा सकता है, वह अन्य प्रकार से नहीं। 'कश्यप संहिता' में इसके गुणों पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है-

स्वादुस्तिक्तः कटुश्चात्र यथा परमोत्कटाः।
स्वादुत्वात् गुरु सस्नेहं बृंहणं लशुनं परम्॥

अर्थात्-लहसुन स्वादु, तिक्त और कटु होता है यह तीनों ही उत्तरोत्तर क्रमशः अधिक बलवान् होते हैं। स्वाद होने से वह गुरु भारी और स्नेहयुक्त होने से अत्यन्त बृंहण हो जाता है।

इससे स्पष्ट है कि लहसुन में स्थित गन्ध भी अपना एक विशेष महत्त्व रखती है। महर्षि चरक ने इसे कृमिहर, कुष्ठनाशक, वातघ्न, उष्णवीर्य एवं गुल्मनाशक आदि बताया है। अन्य आचार्यों ने भी इसे विभिन्न प्रकार के रोगनाशक और स्वास्थ्यवर्द्धक कहा है।

अनेक विद्वान् लहसुन को कामोत्तेजक, जीर्णज्वर नाशक, हृदय, श्वास एवं कम्पनादि को नष्ट करने वाला, वीर्यवर्द्धक, शक्तिवर्द्धक, नेत्र-रोगनाशक, जलोदरघ्न, अर्श, मन्दाग्नि एवं क्षयरोग को दूर करने वाला मानते हैं।

वस्तुतः लहसुन विषयक उक्त मत किसी प्रकार की अतिशयोक्ति नहीं, वरन् हमारे प्राचीन शरीर शास्त्र के ज्ञाताओं द्वारा निर्दिष्ट है। इससे स्पष्ट है कि इसमें अवैज्ञानिकता का भी आरोप नहीं हो सकता, क्योंकि चरक, सुश्रुत आदि आचार्यों ने जो कुछ भी कहा यह अपने अतीन्द्रिय ज्ञान और अनुभवों के आधार पर ही कहा था।

इससे स्पष्ट है कि लहसुन सम्बन्धी खोज कोई नई खोज नहीं है। इसके इतिहास पर दृष्टि डालें तो बहुत पुराना मिलेगा। हमारे देश में यद्यपि उसके गुणों का ज्ञान पहले से ही चला आता है, किन्तु यहाँ के लोग अधिक सौम्य विचार के एवं उत्तेजक पदार्थों से दूर रहने वाले सदा से ही रहे हैं और वे सभी तीक्ष्ण गन्ध वाले पदार्थों को उत्तेजक मानते रहे हैं, इसलिए लहसुन का अधिक प्रचलन नहीं हो सका। परन्तु यह स्पष्ट है कि लहसुन में कोई धर्मविरुद्ध पदार्थ नहीं है और वह गाजर, मूली प्रभृति शाकों के समान खाद्य है, इसलिए औषधि के रूप में सेवन करना तो किसी प्रकार अव्यावहारिक नहीं हो सकता।

शरीर के विभिन्न भागों पर प्रभाव-लहसुन के अनेकानेक गुण कहे जाते हैं, जिनमें एक प्रमुख गुण वायु की सूजन को दूर करना भी है। इसका मूत्र संस्थान पर भी अत्यन्त अनुकूल प्रभाव पड़ता है और उसमें शीघ्र ही क्रियात्मकता आने लगती है। इसका कारण मूत्ररोगादि विकारों में इसका प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है। स्त्रियों के रजोधर्म के निवारण में भी यह उपयोगी है, क्योंकि कुछ विद्वानों के मत में यह उत्तम आर्त व प्रवर्तक है।

स्नायु रोगों में इसका प्रयोग आश्चर्यजनक रूप से लाभकारी सिद्ध होता है। वात रोगों में तो यह अत्यधिक हितकर समझा जाता है तथा अनुभवी चिकित्सक इसका उपयोग पक्षाघात, अर्दित एवं कम्प में भी करते हैं।

वात के अतिरिक्त कफनाशक होने के कारण शरीर में होने वाली वेदना (सर्वाङ्ग दर्द) आदि में देने से शीघ्र लाभ प्रतीत होता है। कण्ठ के विभिन्न रोगों में भी उपयोगी है तथा कण्ठ शोधन होने के कारण स्वरभंग (गला बैठना) को भी शीघ्र ही ठीक कर देता है। धातु और श्वास रोगों में भी उपयोगी है।

आमाशय की स्निग्धता के निवारण में भी लहसुन का प्रयोग सफलता पूर्वक किया जाता है, क्योंकि यह आमाशय की स्निग्धता का शोषण शीघ्र ही करता है। अन्तड़ियों में आये हुए विकारों को दूर करने का गुण भी इसमें है।

अनेक बार कानों में दर्द हो जाता है, कभी-कभी वह दर्द इतना व्याकुल कर देने वाला होता है कि जब तक वह शान्त नहीं हो जाता जब तक किसी भी प्रकार का चैन नहीं पड़ता। शीत ऋतु में कान का ऐसा दर्द अधिक देखा जाता है और क्योंकि लहसुन में शीत निवारण का गुण है, इसलिए उसके द्वारा सर्दी में उत्पन्न कान का दर्द शीघ्र ही शान्त हो जाता है।

क्रमशः अगले अंक में...

आर्यसमाज स्थापना दिवस

❑ भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य, B-2, 92/7B, शालीमार नगर, जिला होशियारपुर (पंजाब) मो० 9464064398

कक्षा के कक्ष से–

स्वतन्त्र-गुरुजी! आज डाक में आपके पास बहुत बड़ा विज्ञापन आया है। इसका अर्थ है कि बड़े समारोह के साथ स्थापना दिवस मनाया जा रहा है। यहां स्थापना शब्द का क्या भाव है?

प्राध्यापक-किसी संगठन की स्थापना का यहां भाव है-बनाना। जैसे कि यज्ञ में अग्नि का आधान होता है, वहां अग्नि को रखकर जलाया जाता है। आर्यसमाज की स्थापना का इस अवसर पर अभिप्राय है कि आर्यसमाज के विचारों की ज्योति सदा जलती रहे। इसीलिए ही आर्यसमाज के सदस्य अपने सत्संगों में जयघोष करते हैं कि '**वेद की ज्योति जलती रहे**'। अमेरिकन दार्शनिक विद्वान् एण्ड्रयूज जैक्सन ने भी आर्यसमाज की अग्नि से उपमा दी है।

सोमेश-यह स्थापना दिवस कुछ जन्मदिन जैसा ही लगता है?

प्रा०-यह ठीक बात है कि यह सारा आयोजन जन्मदिन जैसा ही है। जैसे जन्मदिन पर उस सुलक्षणी घड़ी का स्मरण करते हैं। जब किसी को इस कर्मभूमि पर अनोखा चोला प्राप्त हुआ था। उस पर हमारे यहां जातकर्म के उस अंश का स्मरण किया जाता है, जिसमें जीवन के उद्देश्य और साधन का संकेत है। ठीक इसी प्रकार आर्यसमाज के स्थापना-दिवस पर उस काल की परिस्थितियों और भावनाओं को जहां स्मरण किया जाता है, वहां आर्यसमाज की रीति-नीति और कार्यक्रम पर भी विचार होता है।

निकष-जातकर्म पर कुछ स्पष्ट प्रकाश डालें, तो और भी अच्छा हो?

प्रा०-जात का अर्थ है पैदायश उत्पत्ति, उस अवसर पर उत्पत्ति , सफाई की दृष्टि से जहां बहुत कुछ होता है, वहां जन्म का क्या उद्देश्य है और इसको कैसे साधा जा सकता है इत्यादि प्रक्रिया का विधि-विधान जातकर्म से संकेतित होता है।

इस सबको समझने-समझाने के लिए वहां अनेक मन्त्रों का उल्लेख होता है। उनमें से एक मन्त्र यह है–

अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव।
वेदो वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम्॥

मन्त्रब्राह्मण 1.5.18

इसका अभिप्राय है कि यह जीवन-शरीर, मन, आत्मा का समूह रूप है। अतः जीवनलक्ष्य की सिद्धि के लिए शिशु का देह पाषाण, वज्रसदृश दृढ़ (घृत जैसा पुष्ट, मन मधु जैसा मधुर), बुद्धि परशु-सी तीखी और आत्मा सोने के समान निखरी-चमकीली हो अर्थात् शारीरिक समृद्धि, बौद्धिक विकास और आत्मिक निखार से ही जीवन सफल होता है। अतः यही जीवन का लक्ष्य है और सबकी सदा यही आकांक्षा भी होती है। अतः तब इन भावनाओं की अभिव्यक्ति और विचार के लिए जन्मदिन का आयोजन एक उपयोगी परम्परा बन जाता है।

दूसरी विशेष बात यह है कि जातकर्म एक संस्कार है और यहां संस्कार का सीधा-सा अर्थ है-निखारना। जैसे वस्त्रों, भवनों के संस्कार=निखार से उनमें अनोखापन आ जाता है। ऐसे ही किसी व्यक्ति के जीवन के सर्वांगीण विकास, निखार के लिए इन जातकर्म, नामकरण आदि संस्कारों के माध्यम से जीवन के उद्देश्य और उसकी सिद्धि की प्रक्रिया को निर्दिष्ट किया जाता है। ठीक इसी प्रकार इस स्थापना दिवस के द्वारा यह स्मरण किया जाता है कि आर्यसमाज का यह उद्देश्य है। इसके साथ यह भी सोचा जाता है कि यह भावना, उद्देश्य, लक्ष्य कैसे पूर्ण हो सकता है तथा इसकी यह रूपरेखा और योजना है।

अजय-इस विज्ञापन से तो ऐसा लगता है कि समारोह बड़े धूमधाम से किया जा रहा है? इस तरह से समारोह के आयोजन का क्या भाव है?

प्रा०-आर्यसमाज के अनेक सदस्य अपने जीवन के पूर्व दिनों को स्मरण करते हुए या अपने चारों ओर के दूसरे लोगों के जीवन को देखकर एवं तुलना करके इस अवसर पर आर्यसमाज के अनोखेपन को स्मरण करते हुए अपनी प्रसन्नता को प्रकट करते हैं। तब झूम-झूमकर अपनी भावना व्यक्त करते हुए गा उठते हैं कि-'**लहराएगी-लहराएगी खेती ऋषि दयानन्द की**' यह सब सोचने के लिए और

ऐसी भावनाओं से भरकर श्रद्धापूर्वक आर्य इस समारोह को रचाते हैं।

देवदूत-इस प्रकार समारोह में बैठकर सोचने का क्या कोई विशेष अभिप्राय है?

प्रा०-इस सारे का अभिप्राय यही है कि बात की तह में जाना, गहरे पानी पैठना, क्योंकि छान्दोग्योपनिषद् के ऋषि ने कहा है-**'यदेव विद्यया करोति, श्रद्धयोपनिषदा, तदेव वीर्यवत्तरं भवति'** (1.1.10)। व्यक्ति जिस कार्य को समझ, विश्वास और अपनेपन से करता है, उसी में आनन्द आता है तथा वही पूर्ण सफल होता है, अर्थात् जिस कार्य की पूरी योजना, रूपरेखा बनाकर जब वह किया जाता है, तभी वह कार्य सरलता से सिरे चढ़ता है। जैसे जिस भवन का नक्शा पहले बनवा लिया जाता है, तो उसमें फिर बार-बार तोड़-फोड़ नहीं करनी पड़ती। ऐसा भवन ही व्यवहार के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

इस समारोह के आयोजन का अभिप्राय भी यही है कि हम मिल-बैठकर सोचें, समझें कि यह स्थापना जिस उद्देश्य से की गई थी और उसकी जो योजना बनाई गई थी, क्या हम उस उद्देश्य को सिद्ध कर सकें हैं? या उस उद्देश्य की सिद्धि के लिए क्या हम उस निश्चित योजना पर चल रहे हैं? ऐसी स्थिति के लिए ही कहा है-

हम क्या थे, क्या हो गए, क्या होंगे अभी।
आओ! मिल-बैठ विचारें, ये समस्यायें सभी॥

(भारत-भारती)

रजत-अच्छा हो, पहले इसी बात को स्पष्ट किया जाए कि आर्यसमाज की स्थापना कब, किसने की?

प्रा०-आर्यसमाज की रामकहानी ऋषि दयानन्द से शुरू होती है। आपका जन्म 1824 को टंकारा में हुआ। आपका बालपन का नाम मूलशंकर था। 14वें वर्ष बालक मूल अपने पिता के साथ शिवरात्रि की कथा सुनने के लिए गया। शिव और व्रत की महिमा सुनकर व्रत रखा, रात को मन्दिर में शिवपिण्डी पर चूहों को दौड़ते देखकर पिताजी को जगाया और पिताजी से अनेक प्रश्न पूछे। उन उत्तरों से जब मूल के मन को सन्तोष न हुआ तो अनुमति लेकर घर लौट आया तथा सच्चे शिव के दर्शन का व्रत लिया।

बहिन और चाचा की मृत्यु से वैराग्य की भावना उमड़ी और मृत्यु विजय की ठानी। जब घर में अपने विवाह की तैयारियां देखीं, तो इक्कीस वर्षीय शिक्षित, प्रबुद्ध युवक मूल एक दिन घर से निकल पड़ा। योग सिखाने वाले गुरु की खोज में लगातार 14 वर्ष जंगलों, पहाड़ों, मैदानों की खाक छानी और जहां भी योग सिखाने वाले का पता चला, वही मूल से शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी और फिर दयानन्द संन्यासी बनकर पहुंचा। अन्त में मथुरा आकर ब्रह्मर्षि गुरु विरजानन्द दण्डी से लगभग तीन वर्ष अध्ययन किया। जब दयानन्द ने जीवन साधना की सिद्धि के लिए गुरु जी से विदा मांगी, तो गुरुजी ने पूर्व प्रतिज्ञाओं को परोक्ष में करके आर्षज्ञान की ज्योति जगाने की प्रेरणा देकर जीवन का कांटा ही बदल दिया।

गुरु आज्ञा के अनुसार कार्य करते हुए महर्षि ने अनुभव किया कि केवल किसी को कुछ बता देना ही पर्याप्त नहीं। जिनके लिए वह कार्य है, उनको भी इसमें सम्मिलित करना चाहिए। तभी तो महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में लिखा है-**''हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे होगा उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब जने मिलकर प्रीति से करें। समाज का सौभाग्य बढ़ाना समुदाय का काम है, एक का नहीं।''** (समु० 11, पृ० 349)

इसके साथ दूसरी आवश्यक बात यह है कि संसार सतत प्रवाह के रूप में चलंता रहता है। परम्परा सदा चलती रहे, यह ज्ञानदीप सदा ही जलकर सीधा मार्ग दिखाता रहे। इस स्थायित्व, अमरता और परम्परा को प्रवाहित रखने के लिए 1875 में भारत की महानगरी बम्बई में महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना की।

मनसाराम-संस्था के नाम में आर्य शब्द क्यों जोड़ा गया अर्थात् यही नाम ही क्यों रखा गया?

प्रा०-आर्य शब्द का सीधा-सा अर्थ है=श्रेष्ठ, अच्छा, भला। हर क्षेत्र में यही प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा होती है कि भला ही हो। हमारा मान्य साहित्य एवं परम्परा भी साक्षी है कि हमारे लिए प्रारम्भ से ही आर्य शब्द का प्रयोग होता आ रहा है। हमारे सभी शास्त्रों में आर्य शब्द का भरपूर प्रयोग मिलता है। अत: यह आर्य शब्द जहां सबकी सर्वत्र चाहना है, वहां यह शब्द स्वत: अपने लक्ष्य, योजना को भी स्पष्ट कर देता है।

क्रमश: अगले अंक में....

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का आर्य हो अभिप्राय-मानव की आत्मा में देवत्व जगाने का बीजारोपण करना

❑ पण्डित उम्मेद सिंह विशारद, वैदिक प्रचारक

मनुष्य मात्र के हित-कल्याण सुख-समृद्धि और उन्नति के प्रयोजन से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ईश्वरीय वेद वाणी व संस्कार व संस्कृति को सदैव प्रचारित रहने के लिए आर्यसमाज की स्थापना की थी और कहा था आर्य किसी ईसाई-मुसलमान-बौद्ध किसी सम्प्रदाय की संज्ञा नहीं है और न ही किसी पृथक्, जाति का बोध नहीं है, जो भी श्रेष्ठ धर्मात्मा परोपकारी सत्य विद्यादि गुण और आर्यवर्त देश में सब दिन से रहने वाले हैं, उनको आर्य कहते हैं। वेदों में अनेक स्थानों पर आर्य व दस्यु शब्दों का प्रवेश हुआ है। अर्थात् श्रेष्ठों का नाम आर्य देव और दुष्टों को दस्यु या अनार्य दो नाम हुए, वे ही आर्य हैं कि जो उत्तम वेदों की विद्यादि के प्रचार से सबके उत्तम भोग की सिद्धि और अधर्मी दुष्टों के निवारण के लिए निरन्तर यत्न करते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी चाहते थे कि न केवल भारतवर्ष में अपितु विश्व में सर्वत्र मनुष्य वेदानुकूल धर्मयुक्त गुण-कर्म स्वभाव वाले बने। वे श्रेष्ठ स्वभाव धर्मात्मा परोपकारी और सत्य विद्यादि गुणयुक्त हों। विश्वभर को आर्य बनाने में उन्हें यही अभिप्रेत था कि सब कोई सदाचारी व धार्मिक बने। आजीवन ब्रह्मचारी रहकर उन्होंने इसी के लिए प्रयत्न किया और अपने विचार कार्यों को जारी रखने के लिए उन्होंने आर्यसमाज की अर्थात् एक श्रेष्ठ आचरण वाले सज्जनों का संगठन का नाम दिया।

आर्यों के प्राचीन गौरव के सम्बन्ध में महर्षि के मन्तव्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का मन्तव्य था कि प्राचीन काल में आर्यावर्त (भारत) के निवासी अत्यन्त उन्नत थे। सर्वत्र उनका सार्वभौम शासन था और सम्पूर्ण मानव समाज आर्यावर्त के आचार्यों व विद्वानों से ही धर्म सदाचार और ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा ग्रहण किया करता था। यह आर्यवर्त देश ऐसा है, जिसके सदृश्य भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है और भूगोल में जितने भी देश हैं, इसी देश की प्रशंसा करते हैं और पारसमणी पत्थर तो सुना जाता है यह बात तो झूठी है, परन्तु आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है। सृष्टि से लेके पांच हजार वर्ष से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सर्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में-सर्वोपरि एकमात्र राज्य था। अन्य देशों में मांडलिक छोटे-छोटे राजा रहते थे,

क्योंकि कौरव पांडव पर्यन्त यहां के राज्य और राज-शासन सब भूगोल के राजा और प्रजा रहते थे। महाराजा युधिष्ठिर जी के राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध पर्यन्त यहां के राज्याधीन सब राज्य थे। चीन का भगदत्त अमेरिका का बृहवाहन-यूरोप देश का विडलाक्ष और ईरान का शल्य आदि सब राजा राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध में आये थे। इससे पूर्व जब रघुवंश राजा थे, तब रावण भी यहां के आधीन था। अर्थात् आर्यों का चक्रवर्ती राज्य था।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के अनुसार प्राचीन काल में आर्य लोग राजनैतिक दृष्टि में विश्व के अग्रणी थे और ज्ञान-विज्ञान, धर्म-संस्कृति में भी सबके शिरोमणि थे। अन्य देशों के लोगों ने विद्या धर्म आदि की शिक्षा आर्यावर्त के आर्यों से प्राप्त की थी।

प्राचीन साहित्य में से आर्य राज्यों के सम्बंध में परिचय संक्षिप्त रुप में

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का मानना है कि इसमें सन्देह नहीं है कि तिब्बत से भारत आकर आर्यों ने अपने अनेक राज्य स्थापित किये थे। भारत की प्राचीन मान्यता के अनुसार मनु ने पृथ्वी के सात द्वीपों को विभक्त कर अपने पुत्रों को उनका शासन करने के लिए नियुक्त किया था। ये द्वीप निम्नलिखित थे जम्बूद्वीप-लक्ष्यद्वीप-शाल्मलिद्वीप-कुशद्वीप-क्रोचद्वीप-शाकद्वीप-पुष्करद्वीप। जिन्हें महर्षि दयानन्द जी ने आर्यावर्त कहा है। जिनमें आर्य राजाओं का शासन था। बाद में ऐसा समय आया कि कुछ राज्य आर्य मर्यादाओं का पालन नहीं करते थे और यही लोग असुर-दस्यु-म्लेच्छ आदि कहाए और पृथ्वी के अन्य द्वीपों पर भी

आर्य राजा मनु के वंशजों का शासन था। महाभारत के युद्ध में गान्धार-चीन-तुषार-शक-पल्हव-कम्बोज-दरद-वर्नर-लम्याक-दशेरक-तंगण- बाल्होक आदि सेना लेकर युद्ध में आये थे। प्राचीन काल में आर्यावर्त (भारत) के अतिरिक्त पृथ्वी के अन्य क्षेत्रों में भी आर्य धर्म (वैदिक धर्म) एवं संस्कृति की सत्ता थी। वर्तमान समय में भारत के पश्चिम उत्तर तथा उत्तर पश्चिम में जो भी प्रदेश हैं, उनसे आर्य धर्म और आर्य आचार-विचार का प्राय: लोप हो चुका है। राजनैतिक दृष्टि से वे समय समय पर सार्वभौम आर्य सम्राटों की अधीनता स्वीकार करते रहे और धर्म तथा संस्कृति के क्षेत्र में उनकी मान्यताएँ विश्वास आचरण तथा पूजा-पद्धति आदि आर्यों के सदृश ही रही।

प्राचीन संसार के विविध क्षेत्रों में आर्य सभ्यता के अन्त के संकेत

प्राचीन काल में आर्यावर्त (भारत) के अतिरिक्त पृथ्वी के अन्य अनेक क्षेत्रों में भी आर्य धर्म एवं संस्कृति की सत्ता थी। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का मानना था कि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर अब से पांच हजार वर्ष पूर्व तक आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य था और जितनी विद्या तथा धार्मिक विचार संसार में फैले हैं, उनका आर्यावर्त से ही उन सबका प्रसार हुआ था। आधुनिक इतिहासकार भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि पन्द्रहवीं सदी ई० पूर्व में तुर्की और ईरान के निवासी ऐसे धर्मों के अनुयायी थे, वैदिक आर्य धर्म से जिनकी अनेक अंशों में समता थी।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की चक्रवर्ती आर्य राज्य की कल्पना

महाभारत युद्ध के समय तक पृथ्वी पर आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा। पांडव-युधिष्ठिर भी चक्रवर्ती आर्य सम्राट् थे। महर्षि चाहते थे कि आर्यों के इस विलुप्त गौरव की पुन: स्थापना हो, एक बार फिर आर्यों का शासन और सर्वत्र आर्य धर्म का प्रचार हो। वे सच्चे अर्थों में आर्य श्रेष्ठजनों का शासन स्थापित करना चाहते थे। सम्पूर्ण विश्व के मानव समाज को आर्य बनाना ही उनका अभीष्ट था। मानव मात्र को श्रेष्ठ व सदाचारी बनाने के लिए जो महान् उद्योग महर्षि द्वारा प्रारम्भ किया गया था। उसी को जारी रखने के लिए उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की थी और आर्यसमाज के दस नियम उन्होंने बनाए थे उनमें छटा नियम यह है-"**संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना**" और सम्पूर्ण संसार की सर्वतोमुखी उन्नति के लिये ही महर्षि ने आर्यसमाज नाम से एक संगठन का निर्माण किया था। उनकी कल्पना थी कि आर्यावर्त के लोग एक बार फिर सच्चे रूप में आर्य बनकर भारत को विश्वगुरु बनाएं।

नोट-इस लेख में आर्यसमाज का इतिहास भाग (1) लेखक-डा० सत्यकेतु विद्यालंकार से सहायता ली गई है।

संम्पर्क-गढ़ निवास मोहकमपुर, देहरादून (उत्तराखण्ड)
मो० 9411512019, 9557641800

सत्य कड़वा—झूठ सफेद क्यों?

सत्य कडवा होता, लेकिन अंत में जीत सत्य की ही होती है। पहले सत्य धैर्य परखता है फिर व्यक्ति के साथ आगे बढ़ता है और सत्यमेव जयते कहता है। वैज्ञानिक विश्लेषण में इस पर शायद ही अन्वेषण हुआ है, पर समय ने सदैव सत्य को उजागर किया है। अपनी संवेदना से आविर्भूत होकर इसको अभिव्यक्ति दिया है और हर बार स्थापित किया है। सत्य एक परख है-तेज है विश्वास है; एक प्रतिरक्षात्मक आस और संत्रास है। सत्य गिलोई की भांति हमारे अंतर्मन में इम्युनिटी को बढाता है, जैसे गिलोई अपने में समूल होता है, बिना जड़ के होकर भी सर्वव्यापित होता और स्वत: फैलता है रक्षात्मक-सकारात्मकता बन सजता है। लेकिन वस्तुस्थिति में कड़वा होता है, सत्य उसी पराकाष्ठा का बल है, निर्बल-सबल में भेद नहीं करता है। स्वयं में निर्मल-संतृप्त होता, इसमें छल नहीं होता, इसीलिए गिलोई की भांति अमरवेल सम कडवा होता। लेकिन झूठ सफेद होता-क्योंकि इसमें सात रंग होता, सात रंगों के समावेश से ही सफेद बनता है और हरेक रंग का एक नाद (फ्रीक्वेंसी) होता है जो इसे monochromatic-coherent बनकर चलने नहीं देता है। हरेक नाद का अलग ऊर्जा अर्थात् निनाद होता, ऐसे निनाद-ऊर्जा जब साथ मिल बैठते, अलग सुर-ताल देते अलग रंगों के परिवेश और आवेश से झूठ का विकार बन जाता है और झूठ सफेद कहलाता है।

-डॉ० वासुदेव प्रसाद, म०नं० 870, सैक्टर-16, पंचकूला

ऋषि दयानन्द न आते तो आर्य जाति की आध्यात्मिक एवं सामाजिक उन्नति न होती

❑ मनमोहन कुमार आर्य, 196 चुक्खूवाला-2, देहरादून-248001, मो० 9412985121

मनुष्य की पहचान व उसका महत्त्व उसके ज्ञान, गुणों, आचरण एवं व्यवहार आदि से होता है। संसार में 7 अरब से अधिक लोग रहते हैं। सब एक समान नहीं है। सबकी आकृतियां व प्रकृतियां अलग हैं तथा सबके स्वभाव व ज्ञान का स्तर भी अलग है। बहुत से लोग अपने ज्ञान के अनुरूप सत्य का आचरण भी नहीं करते। स्वार्थ वा लोभ तथा अनेक कारणों से वह प्रभावित होते हैं और यदि वह उचित व अनुचित का ध्यान रखें भी तथापि वह दूसरों की प्रेरणा से सत्य व असत्य सभी प्रकार के आचरण करते हैं। हमारे देश में सृष्टि की आदि से ही ईश्वर प्रेरित वेदों के आधार पर वैदिक धर्म प्रचलित था। हमारी इस सृष्टि को बने हुए 1.96 अरब वर्ष से अधिक समय हो चुका है। इसमें यदि लगभग 5000 वर्ष पूर्व हुए महाभारत युद्ध की अवधि को निकाल दें, तो शेष 1.96 से अधिक अवधि तक आर्यावर्त वा भारत सहित पूरे विश्व में वेदों पर आधारित वैदिक धर्म ही प्रचलित रहा है। सभी लोग इसी विचारधारा, मत व सिद्धान्तों का पालन व आचरण करते थे। इसका कारण यह था कि वेद की सभी मान्यतायें सृष्टि के रचयिता एवं पालन ईश्वर द्वारा प्रेरित थी, पूर्ण सत्य पर आधारित थी और इनके पालन से ही मनुष्य व उसकी आत्मा का कल्याण होता है।

सृष्टि के आरम्भ से ही हमारे देश में ऋषि परम्परा थी। ऋषि सद्ज्ञान से युक्त तथा ईश्वर का साक्षात्कार की हुई योगियों की आत्मायें हुआ करती थीं। वह निर्भ्रान्त ज्ञान से युक्त होते थे। वह किसी भी व्यक्ति के प्रश्नों व आशंकाओं का समाधान अपने तर्क व युक्तियों से करने में समर्थ होते थे। उनके समय में धर्म में अकल का दखल नहीं जैसा विचार व सिद्धान्त काम नहीं करता था जैसा कि आजकल कुछ मतों में होता है। इसी कारण से वेद सर्वकालिक एवं सर्वमान्य धर्म ग्रन्थ रहे हैं, आज भी हैं तथा प्रलयावस्था तक रहेंगे। जिस प्रकार से आलस्य प्रमाद से हम लोग ज्ञान को विस्मृत कर अज्ञानी हो सकते हैं, उसी प्रकार से महाभारत काल के बाद वेद ज्ञान से युक्त आर्यजाति अपने आलस्य प्रमाद से वेद ज्ञान से च्युत व विमुख हो गई। वेदों का स्थान देश देशान्तर में विषसम्पृक्त अन्न के समान मत-मतान्तरों के ग्रन्थों व उनकी अविद्यायुक्त शिक्षाओं ने ले लिया जिसके निराकरण के लिये ही ऋषि दयानन्द सरस्वती (1825-1883) ने वेदमत वा वैदिक धर्म की पुनर्स्थापना की थी। आज वेद ज्ञान प्रायः पूर्ण रूप में उपलब्ध है। हम ईश्वर को न केवल जान सकते हैं, अपितु उसका साक्षात्कार भी कर सकते हैं। वेद के बाद वेदांग ग्रन्थों सहित प्रमुख स्थान पर आर्ष व्याकरण, उपनिषदों व 6 दर्शन ग्रन्थों का स्थान है। इसका अध्ययन कुछ ही समय में किया जा सकता है। हिन्दी व अंग्रेजी आदि भाषाओं में भी उपनिषद व दर्शनों सहित वेदों के भाष्य व टीकायें भी उपलब्ध हैं। वैदिक विद्वान् मनुष्य की आत्मा व परमात्मा विषयक किसी भी शंका का समाधान करने के लिये तत्पर हैं। ऐसी स्थिति में संसार में मनुष्यों द्वारा वेदज्ञान की उपेक्षा करना उचित नहीं है। हम अनुमान करते हैं कि विज्ञान की वृद्धि के साथ ही लोग अविद्या, अज्ञान व मिथ्या परम्पराओं से युक्त मान्यताओं व मतों की उपेक्षा कर वेदों की ओर आकर्षित होंगे और अपने जीवन को वैदिक संस्कारों वा ज्ञान से सजाने व संवारने के तत्पर होंगे। हमें लगता है कि ऋषि दयानन्द इस प्रक्रिया को आरम्भ कर गये थे। इस प्रक्रिया की गति वर्तमान में कुछ कम है, परन्तु ज्ञान व विज्ञान की वृद्धि के साथ इसमें भी वृद्धि होगी और यूरोप के पक्षपात रहित लोग वेदों का अध्ययन कर ईश्वर व आत्मा के ज्ञान व इनकी प्राप्ति के लिये वेदों को अपनायेंगे व उनकी शिक्षाओं के अनुसार आचरण करेंगे।

ऋषि दयानन्द के सामाजिक जीवन में प्रवेश से पूर्व देश नाना मत-मतान्तरों से ढका व पटा हुआ था। सभी मत अविद्या से युक्त विष सम्पृक्त अन्न के समान थे। ईश्वर तथा आत्मा का यथार्थ व पूर्ण सत्यस्वरूप किसी धर्माचार्य व मत-धर्मानुयायी को विदित नहीं था। सभी मध्यकाल के अज्ञानता के समय में स्थापित अपने-अपने मतों के अनुसार अपनी पुस्तकों का अध्ययन करते तथा उनके अनुसार क्रियायें व पूजा अर्चना आदि करते थे। सत्य के अनुसंधान का कहीं कोई प्रयास होता हुआ नहीं दीखता था। देश व विदेश में सर्वत्र अज्ञान व पाखण्ड विद्यमान थे। भारत में मूर्तिपूजा एवं फलित ज्योतिष ने अधिकांश देशवासियों को ईश्वर के सत्यस्वरूप

के ज्ञान व सच्ची उपासना सहित पुरुषार्थ से विमुख किया हुआ था। जन्मना-जाति ने समाज को कमजोर व क्षय रोग के समान ग्रसित किया हुआ था और आज भी स्थिति चिन्ताजनक है। छुआछूत का व्यवहार भी हिन्दू समाज में होता था। बालविवाह प्रचलित थे जिसमें बच्चों को, जिनका विवाह किया जाता था, विवाह का अर्थ भी पता नहीं होता था। विवाहित बाल कन्यायें विधवा हो जाने पर नरक से भी अधिक दु:खी जीवन व्यतीत करती थीं। यत्र तत्र सती प्रथा भी विद्यमान थी। विधवा विवाह को पाप माना जाता था तथा कोई इसे करने की सोच भी नहीं सकता था।

स्त्रियों व शूद्रों की शिक्षा का प्रबन्ध नहीं था। वेदों का अध्ययन व श्रवण इन दोनों के लिये वर्जित थे। अंग्रेज देश को ईसाई बनाना चाहते थे। संस्कृत भाषा, जो ईश्वरीय भाषा व देव-विद्वानों की भाषा है, उसे नष्ट करने के षड्यन्त्र जारी थे। ईसाई एवं मुसलमान लोभ, भय तथा छल से हिन्दुओं का मतान्तरण वा धर्मान्तरण करते थे। देश में जो ईसाई व मुस्लिम हैं वह सब विगत 1200 वर्षों में धर्मान्तरण की प्रक्रिया से ही बनाये गये हैं। सर्वश्रेष्ठ वेद की शिक्षाओं की ओर न हिन्दू और न किसी अन्य समुदाय का ध्यान जाता था। सामाजिक प्रथाओं, पर्वों, व्रत, उपवास, गंगास्नान, भागवत-कथा व रामचरित मानस के पाठ आदि को मनुष्य जीवन का प्रमुख धर्म व कर्तव्य जाना व माना जाता था। कुछ वर्गों के प्रति पक्षपात व उनका शोषण भी किया जाता था। ऐसी विषम परिस्थितियों में अधिकांश जनता अभाव, रोगों, भूख, आवास की समुचित व्यवस्था से दूर अपना जीवन व्यतीत करने के लिए विवश थी। अंग्रेज देश का शोषण करते थे तथा देशभक्तों पर अत्याचार करते थे। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में ऋषि दयानन्द का गुजरात के मोरवी नगर तथा इसके टंकारा नामक कस्बे में एक ब्राह्मण कुल में जन्म होता है।

ऋषि दयानन्द का बचपन का नाम मूलशंकर था। 14 वर्ष की आयु में शिवरात्रि के दिन उन्हें मूर्तिपूजा के प्रति अविश्वास व अनास्था हो गयी थी। बहिन व चाचा की मृत्यु ने इनकी आत्मा में वैराग्य के भावों का उदय किया। माता-पिता ने इनकी इच्छानुसार काशी आदि जाकर अध्ययन करने की सुविधा प्रदान नहीं की। विवाह के बन्धन में बांधने की तैयारी की गई। इस बन्धन में न फंसने की इच्छा से मूलशंकर जो आगे चलकर ऋषि दयानन्द बने, अपनी आयु के 22वें वर्ष में ईश्वर की खोज में घर से निकल भागे और उन्होंने लगभग 17 वर्षों तक देश के अनेक भागों में धार्मिक विद्वानों तथा योगियों आदि की संगति की तथा लगभग 3 वर्ष तक योगेश्वर श्रीकृष्ण की जन्मनगरी मथुरा में प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी से अध्ययन कर वेदों की व्याकरण अष्टाध्यायी-महाभाष्य पद्धति तथा निरुक्त पद्धति के विद्वान बने। गुरु की प्रेरणा से आपने देश की सभी धार्मिक समस्याओं अर्थात् अविद्या, अन्धविश्वास, मिथ्या परम्पराओं तथा सामाजिक बुराइयों को दूर करने सहित समाज-सुधार का कार्य किया। देश को स्वतन्त्र करने के लिये भी गुप्त रीति से काम किया। इसके अच्छे परिणाम देखने को मिले। कलकत्ता, मुम्बई, बिहार, पंजाब, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश सहित देश के अनेक भागों में वेद धर्म प्रचारक एवं अविद्या-अन्धविश्वास-पाखण्ड-कुरीति निवारक संस्था 'आर्यसमाज' की स्थापना हुई और इनके माध्यम से वेदप्रचार, अज्ञान-अन्धविश्वास वा अविद्या निवारण का कार्य आरम्भ हो गया। शिक्षा जगत् को भी ऋषि दयानन्द की महत्त्वपूर्व देन है। ऋषि दयानन्द वेदाध्ययन की गुरुकुल प्रणाली के प्रणेता थे। उन्हीं के अनुयायियों ने लाहौर में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूल व कालेज स्थापित कर उसे देशभर में फैलाया और देश से अज्ञान को दूर किया। इसका सुपरिणाम हमारे सामने हैं। देशभर में शिक्षा व ज्ञान की उन्नति हुई, देश स्वतन्त्र हुआ तथा सामाजिक कुरीतियां दूर होने सहित अन्धविश्वासों में भी कमी आयी। सभी मतों की पुस्तकों व उनकी व्याख्याओं पर भी ऋषि दयानन्द के उपदेशों व तर्क एवं युक्तियों का प्रभाव पड़ा और उन्होंने अपनी अविद्यायुक्त बातों को भी तर्कसंगत सिद्ध करने का प्रयत्न किया।

ऋषि दयानन्द यदि न आते तो सनातन ज्ञान वेद, वेदों पर आधारित वैदिक धर्म तथा संस्कृति जो उनके समय लुप्तप्राय: थे, लुप्त ही रहते। आर्यसमाज की अनुपस्थिति में विद्या का प्रचार व प्रसार नहीं होता जो ऋषि दयानन्द व उनके अनुयायी विद्वानों ने अपने मौखिक प्रचार, ग्रन्थों के लेखन व प्रकाशन सहित शास्त्रार्थ एवं शंका-समाधान आदि के द्वारा किया। वैदिक धर्म के विरोधी मत हिन्दुओं का धर्मान्तरण कर उन्हें अपने मत में बलात् सम्मिलित करते रहते। अन्धविश्वासों व असंगठन सहित सामाजिक कुरीतियों के कारण ऐसा होना

शेष पृष्ठ 16 पर....

कम आनन्ददायक नहीं होती हमारी सहज स्वीकार्यता भी

❑ सीताराम गुप्ता, ए.डी. 106 सी., पीतमपुरा, दिल्ली-110034 # 9555622323

एक बार एक व्यक्ति एक गाय दान करना चाहता था। वह अपने गाँव के पास के एक आश्रम में गया और आश्रम प्रमुख से कहा, ''महाराज, मैं आश्रम को एक गाय दान करना चाहता हूँ। यदि आप इसे स्वीकार करेंगे तो बड़ी कृपा होगी।'' आश्रम प्रमुख ने जब ये बात सुनी तो प्रसन्न होकर कहा, ''ये तो बड़ी ही अच्छी बात है। गाय आ जाने से यहाँ रहने वाले विद्यार्थियों व अन्य आश्रमवासियों को दूध मिलने लगेगा।'' गाय पाकर सभी आश्रमवासी प्रसन्न थे। कुछ दिनों के बाद गाय दान करने वाला व्यक्ति पुन: आश्रम आया और कहने लगा, ''महाराज, मैं अपनी गाय वापस लेने आया हूँ। यदि आप मेरी गाय वापस लौटा देंगे तो आपकी बड़ी कृपा होगी।'' आश्रम प्रमुख ने कहा, ''ये तो बड़ी ही अच्छी बात है।'' ये कहकर उन्होंने बिना कुछ पूछताछ किए बड़े प्यार से गाय उसके पुराने स्वामी को लौटा दी।''

जब वह व्यक्ति अपनी गाय लेकर वापस चला गया तो आश्रम प्रमुख के एक शिष्य ने उनसे पूछा, ''गुरुजी, जब वह व्यक्ति गाय दान करने आया था तब भी आपने ये कहा था कि ये तो बड़ी ही अच्छी बात है और आज जब वह व्यक्ति गाय वापस माँगने लगा तो भी आपने कहा कि ये तो बड़ी ही अच्छी बात है। गाय वापस देने से हम सब दूध से वंचित हो गए। इसमें कौनसी अच्छी बात है?'' गुरुजी ने कहा, ''देखो जब गाय आई तो दूध देती थी, अत: इससे अच्छी बात और क्या हो सकती थी? गाय दूध देती थी तो गंदगी भी फैलाती थी और उसकी देखभाल भी करनी पड़ती थी। अब गाय वापस चली गई है तो अब हम सब आश्रमवासियों को गोबर की गंदगी व गाय की देखभाल से भी तो मुक्ति मिल गई है और ये भी संभव है कि गाय दान करने वाले को इस समय गाय की हम सबसे अधिक आवश्यकता हो। अत: अब इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है?''

कुछ महीनों के बाद गाय दान करनेवाला व्यक्ति पुन: आश्रम में आया और कहने लगा, ''महाराज, मैंने गाय दान में देने के बाद उसे वापस लेकर अच्छा नहीं किया। मैं गाय को वापस देने आया हूँ, कृपया गाय को स्वीकार कर मेरी भूल को माफ करें।'' आश्रम प्रमुख ने कहा, ''ये तो बड़ी ही अच्छी बात है।'' उन्होंने गाय को दोबारा आश्रम में रख लिया और अपने शिष्यों को उसकी देखभाल करने का निर्देश दिया। पता चला कि अब यह गाय दूध भी नहीं देती है। जब वह व्यक्ति गाय को आश्रम में छोड़कर वापस चला गया तो आश्रम प्रमुख के एक शिष्य ने प्रतिवाद करते हुए पूछा, ''गुरुजी, अब यह गाय दूध भी नहीं देती है अत: किसी काम की नहीं है। अब मुफ्त में इसका गोबर उठाना पड़ेगा और इसकी सेवा करनी पड़ेगी। फिर भी आपने क्यों कहा कि ये तो बड़ी अच्छी बात है? अब इसमें भी कौनसी अच्छी बात रह गई है?''

शिष्य की इस बात पर आश्रम प्रमुख मुस्कराए और उससे कहा कि गाय की सेवा करनी पड़ेगी और इसका गोबर उठाना पड़ेगा तभी तो मैंने कहा कि ये तो बड़ी ही अच्छी बात है। गाय दूध नहीं देती तो कोई बात नहीं। दूध के कारण गाय की सेवा करना तो सकाम कर्म की श्रेणी में आता है। अब यह दूध नहीं देती तो इसकी सेवा निष्काम कर्म की श्रेणी में आएगी। निष्काम कर्म से उत्कृष्ट कोई बात हो ही नहीं सकती। वैसे भी गोमाता की सेवा करना हमारे यहाँ धर्म माना जाता है। गाय की सेवा कर हम सहज ही धर्म में प्रवृत्त हो सकेंगे। दूसरे गाय के गोबर से तैयार खाद आश्रम के पेड़-पौधों व खेतों में डालने के काम आएगी। फिर कुछ दिनों के बाद जब यह गाय पुन: ब्याएगी तो दूध भी स्वत: सुलभ हो जाएगा। ये अच्छी बात हुई कि नहीं? अब शिष्य निरुत्तर था। वास्तव में लाभ-हानि अथवा प्रसन्नता हमारे दृष्टिकोण पर अधिक निर्भर करती है।

किसी भी घटना के मुख्यत: दो पक्ष होते हैं एक सकारात्मक पक्ष व दूसरा नकारात्मक पक्ष। यह हमारे दृष्टिकोण पर निर्भर करता है कि हम किसी भी घटना को किस रूप में लेते हैं। उसका सकारात्मक पक्ष देखते हैं या नकारात्मक पक्ष। यदि हम हर घटना के केवल सकारात्मक पक्ष को ही देखते हैं तो हम जीवन में दुखों से बचे रहकर असीम खुशियाँ प्राप्त कर सकते हैं। जीवन में सदैव प्रसन्न

बने रहने का एकमात्र यही उपाय है कि हम घटनाओं के केवल सकारात्मक पक्ष को ही देखें और आशावादी बने रहें। किसी भी घटना में केवल प्रत्यक्ष अथवा वर्तमान लाभ देखना हमारी अल्पज्ञता, संकुचित दृष्टि व घोर व्यावसायिकता का द्योतक है। हमें इससे बचना चाहिए। गुणीजनों का मानना है कि ऊपर से कोई स्थिति चाहे जैसी भी दिखलाई पड़े लेकिन उसमें हमारे लिए लाभप्रद स्थितियाँ भी अवश्य ही निहित होती हैं।

कुछ व्यक्तियों की आदत होती है कि वे प्राय: किसी भी बात को बिना तर्क-वितर्क के स्वीकार ही नहीं करते चाहे वे बातें उनके हित में ही क्यों न हों। उनमें स्वीकार्यता का गुण ही नहीं होता। कुछ लोगों की आदत होती है कि हर स्थिति में वे केवल एक ही प्रश्न करते हैं, ''इससे मुझे क्या लाभ होगा?'' जीवन में हर कार्य मात्र भौतिक लाभ के लिए ही नहीं किया जाता। जीवन को सहजता से जीने और प्रसन्न रहने के लिए स्वीकार्यता एक उपयोगी व अनिवार्य आदत अथवा गुण है। यदि हम हर घटना को सहज रूप में लेंगे तो इससे जीवन में हम हर प्रकार के तनाव से बचे रहेंगे। वैसे भी हम जिन कई बातों को मानने से मना कर देते हैं वे हमारे दायित्व के अंतर्गत ही आती हैं। उन्हें स्वीकार करके हम अपने कर्तव्य का पालन ही करते हैं और कर्तव्य-पालन से बढ़कर अच्छी बात और क्या हो सकती है?

जब भी हम किसी घटना अथवा क्रियाकलाप को केवल लाभ की दृष्टि से देखते हैं तो उसमें हानि होने पर बहुत दु:ख होता है। जीवन में ऐसे ही अनेक दु:खों का संग्रह करके हम महादु:खी बने रहते हैं। जीवन में हर कार्य में केवल लाभ ही लाभ हो ये संभव भी नहीं। जो व्यक्ति किसी भी घटना अथवा क्रियाकलाप को लाभ-हानि से ऊपर उठकर स्वीकार कर लेते हैं, उन्हें हानि होने पर कोई पीड़ा या दु:ख नहीं होता, लेकिन लाभ होने पर स्वाभाविक रूप से प्रसन्नता अवश्य होती है। लाभ-हानि से निरपेक्ष अथवा नि:स्पृह होकर कार्य करने से लाभ होने पर अनेकानेक प्रसन्नता के अवसर हमारे जीवन की वास्तविकता बन हमें आनन्द व अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करने में पूर्णत: सक्षम होते हैं, इसमें संदेह नहीं। अत: जीवन में अधिकाधिक प्रसन्नता के लिए हमें अपनी स्वीकार्यता को निरंतर विकसित करते रहने का प्रयास करते रहना चाहिए।

ईश्वर-भक्त महान् बनो

जगतपिता जगदीश निरंजन, दुनिया का निर्माता है।
जग का पालन करता है वह, जग को वही मिटाता है।
सूरज, चांद, सितारों को वह, रचता और टिकाता है।
निराकार, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक है, नजर कहीं ना आता है॥ 1॥

सब जीवों को कर्मों के अनुसार, उचित फल देता है।
राजाओं का राजा है वह, नेताओं का नेता है।
वेदों के अनुसार मनुष्य जो, जीवन सकल बिताते हैं।
बड़े भाग्यशाली हैं सज्जन, मोक्ष धाम को पाते हैं॥ 2॥

यही सृष्टि का नियम निराला, जो दुनिया में आता है।
वह कर्मों को भोग-भोग कर, इस दुनिया से जाता है।
न्यायकारी जगदीश दयामय, पक्ष-पात ना करता है।
जो करते हैं भले काम, प्रभु उनके संकट हरता है॥ 3॥

बात भले की बता रहा हूँ, सुनो जगत् के नर-नारी।
इस दुनिया से चले गये, ज्ञानी-ध्यानी, वेदाचारी।
गौतम, कपिल, कणाद, पतंजलि, दयानन्द जैसे ज्ञानी।
राम-लखन, हनुमान, कृष्ण से, वीर बहादुर बलवानी॥ 4॥

हिरण्यकुश, बाली, रावण अरु, कुम्भकर्ण अत्याचारी।
जिसका सुनकर नाम कांप उठती थी यह दुनिया सारी।
अब्दाली, चंगेज, सिकन्दर, खिलजी, आलमगीर गए।
चाऊ एन लाई, अयूब भुट्टो, सब जालिम बे-पीर गए॥ 5॥

लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, मानवता के दीवाने।
वेदों का प्रचार रात-दिन, करते थे वे मस्ताने।
तिलक, लाजपत, विपिनचन्द्र, भारत के सच्चे नेता थे।
भारत माँ के पुत्र निराले, अद्भुत वीर विजेता थे॥ 6॥

मदनलाल बिस्मिल शेखर, ऊधमसिंह को तुम याद करो।
देशभक्त बलवान बनो तुम, जीवन मत बर्बाद करो।
राजगुरु, सुखदेव, भगतसिंह, राजपाल से वीर बनो।
नेता वीर सुभाष चन्द्र से, देश-भक्त रणधीर बनो॥ 7॥

हेरा-फेरी से जोड़ा धन, यहीं पड़ा रह जाएगा।
धर्म एक है सच्चा साथी, अन्तिम साथ निभाएगा।
मानव हो, मानवता धारो, ईश्वर का गुणकान करो।
'नन्दलाल' की विनय मान लो, जागो, मत अभिमान करो॥ 8॥

-पं० नन्दलाल निर्भय पत्रकार, भजनोपदेशक, आर्यसदन बहीन, जनपद पलवल (हरयाणा) मो० 9813845774

मूर्ति क्यों तोड़ दी?

❑ राजेश आर्य, गांव आट्टा, जिला पानीपत मो० 9991291318

गतांक से आगे....

पिछड़ी जाति एवं अनुसूचित जाति फेडरेशन कानपुर के नेता श्री जी.एल. साहू ने कहा-''अगर राम मुझे कहीं मिल जाये तो मैं जूते लगाना नहीं भूलूँगा। मेरा हिन्दूधर्म से विश्वास हट गया है। ...पेरियार ने देश को सन्देश दिया है कि राम भगवान् नहीं, राम एक हत्यारा था। इसलिए उसे आदर की दृष्टि से नहीं देखना चाहिये। ...मेरी लाइब्रेरी में जब भी कोई विदेशी आता है तो मैं उससे यही कहता हूँ कि राम और कृष्ण को जूते मारो...।''

एक अन्य वक्ता शालिग्राम ने कहा-''राम का पुतला जलाने पर प्रतिबन्ध लगाया जा रहा है। रावण के पुतले जलाने पर प्रतिबन्ध क्यों नहीं? बन्धुओ, एकता का परिचय दो। राम को नहीं उसके पूरे परिवार को जला दो। ...श्रीमान् पेरियार का आदर्श मेरे साथ है।''

इस भाषणबाजी के बाद पुतलों में आग लगा दी गई। अन्य लोगों ने अपने साथ लाये राम, लक्ष्मण, सीता के कलेण्डरों को गन्दे-गन्दे नारे लगाकर जला दिया। इस घटना का विस्तृत विवरण दैनिक नवभारत टाइम्स के बम्बई संस्करण (दिनांक 31 दिसम्बर, 1974) में प्रकाशित हुआ। उसका संक्षिप्त रूप जनज्ञान मार्च 1975 में छपा था।

सोचिये, जिसकी हिन्दू धर्म पर आस्था नहीं है, क्या उसके द्वारा हिन्दू आस्था के प्रतीक तोड़ना व जलाना असंवैधानिक नहीं है? पेरियार के इन विचारों और कार्यों का आज भी प्रचार किया जा रहा है। दलितों के नाम पर राजनीति करने वाले स्वार्थी लोगों ने डॉ० अम्बेडकर को भी पेरियार के साथ जोड़ दिया। सम्भवत: उसी के परिणाम स्वरूप उत्तर प्रदेश में डॉ० अम्बेडकर की मूर्ति भी तोड़ी गई। मेरे विचार से इस लज्जाजनक कृत्य के दोषी दोनों ही हैं-डॉ० अम्बेडकर के नाम से पेरियार के विचारों का प्रचार करने वाले भी और प्रतिक्रिया स्वरूप डॉ० अम्बेडकर की मूर्ति तोड़ने वाले भी। क्योंकि वास्तव में डॉ० अम्बेडकर और पेरियार के विचार बहुत भिन्न थे। जैसे-पेरियार आर्यों (ब्राह्मण आदि हिन्दुओं) को विदेशी आक्रमणकारियों की सन्तान मानते थे, जबकि डॉ० साहब भारत को ही आर्यों की आदिभूमि मानते थे। पेरियार संस्कृत भाषा के कट्टर विरोधी थे, जबकि डॉ० साहब संस्कृत को राष्ट्रभाषा बनाने के पक्षधर थे। पेरियार दलितों के लिए अलग देश चाहते थे और 1940 में उन्होंने कांचीपुरम् में प्रस्तावित द्रविडिस्तान का नक्शा जारी किया था, जिसे अंग्रेजों का समर्थन नहीं मिला, जबकि डॉ० साहब अखण्ड भारत के समर्थक थे। पेरियार दलितों को मुस्लिम बनने के लिए प्रोत्साहित करते थे, जबकि डॉ० साहब ने ईसाइयों और मुस्लिमों के प्रलोभन ठुकरा दिये व अपने अनुयायियों को बौद्ध बनाया। पेरियार का दलितोद्धार हिन्दू ग्रन्थों व देवी-देवताओं की आलोचना तक ही सीमित था, जबकि डॉ० साहब वास्तव में दलितों का उत्थान चाहते थे। इसके लिए वे आरक्षण को भी आवश्यक नहीं मानते थे। डॉ० साहब ने भारत का संविधान बनाने में मुख्य भूमिका निभाई, जबकि पेरियार ने तिरंगे झण्डे व भारत के संविधान को जलाने तक की भी बात कह दी थी।

पेरियार कैसे दलितोद्धारक थे, यह एक वंचित बुद्धिजीवी एम. वेंकटेशन की पुस्तक ''ईवी रामस्वामी नायकर का दूसरा पक्ष पढने से पता चलता है। वे लिखते हैं कि उन्होंने (पेरियार ने) कहा कि कपड़े के दाम इसलिए बढ़ने लगे हैं, क्योंकि वंचित वर्ग की महिलाएँ कपड़े पहनने लगी हैं। बेरोजगारी इसलिए बढ़ रही है, क्योंकि वंचित नौकरियों के लिए आवेदन करने लगे हैं। चावल के दाम इसलिए बढ़ गये हैं कि शराब पीने वाले चावल खाने लगे है।'' इसके बाद वे लिखते हैं कि ''पेरियार वंचितों, उनकी शिक्षा, उनके कल्याण और विकास के कट्टर विरोधी थे। एक वंचित के तौर पर उनके विचार और आकलन को पढ़ने के बाद मैं इसी नतीजे पर पहुँचा हूँ।''

श्री सतीश पेडणेकर ने लिखा है-''कई बार लगता है कांशीराम और मायावती ने अंग्रेजी में छपे पेरियार के विचारों के आधार पर पेरियार के बारे में सोच बनाकर उसको बसपा पर थोप दिया। उन्होंने पेरियार के तमिल में

छपे विचारों को पूरी तरह पढ़ा नहीं होगा। पेरियार का ज्यादातर साहित्य और भाषण तमिल में ही है। यदि वे पेरियार की वंचित और अल्पसंख्यक विरोधी सोच को जानते होते तो उन्हें 'दलित महापुरुषों' में शामिल न करते। पेरियार के विचारों को न जानने के कारण ही कांशीराम और मायावती ने पेरियार की मूर्ति स्थापित करने के नाम पर अपनी उत्तर प्रदेश की सरकार दांव पर लगा दी थी।''

(पाञ्चजन्य, 28 जून, 2015)

डॉ० अम्बेडकर जैसे राष्ट्रवादी विचारक की मूर्ति तोड़ा जाना वास्तव में दुर्भाग्यपूर्ण घटना है। इसमें शरारती तत्त्वों की करतूत से मना नहीं किया जा सकता, क्योंकि गुण्डागर्दी करने वाले असामाजिक तत्त्व ऐसे ही अवसरों की ताक में रहते हैं। उन स्वार्थियों का समाज के हानि-लाभ से कोई वास्ता नहीं होता। चाहे कितना भी अच्छा आन्दोलन हो, उसमें हिंसक प्रवृत्ति के लोग बिना बुलाये शामिल हो जाते हैं और तोड़-फोड़ करते हैं। चाहे हरयाणा का जाट आरक्षण आन्दोलन हो या 'पद्मावत' फिल्म के विरोध में आन्दोलन हो, ऐसे तत्त्व सभी जगह घुस गए और हिंसा व आगजनी कर अपनी आंखों को तृप्त व आत्मा को सन्तुष्ट कर गए। फिर आन्दोलन के नेता सफाई देते रहे कि यह खून-खराबा जाटों ने नहीं किया या राजपूत ऐसा अमानवीय कृत्य नहीं कर सकते। इससे क्या होता है, बदनामी तो आन्दोलन करने वालों की होगी। इसलिए किसी भी आन्दोलन के नेता को अमर क्रान्तिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल के शब्दों को अवश्य याद रखना चाहिए।

सभी बड़े-बड़े आन्दोलनों में देखा गया है कि साधु और महान् चरित्रवान् पुरुषों के साथ कुछ नरपिशाच भी दल में आ मिलते हैं। यह आन्दोलनों का दोष नहीं है, यह तो हमारे मनुष्य चरित्र का ऐब है। शायद लेनिन ने भी कहा था कि प्रत्येक सच्चे बोलशेविक के साथ कम से कम उनतालीस बदमाश और साठ मूर्ख उनके दल में मिल गये थे और मैंने श्रद्धेय शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय जी से सुना है कि देशबन्धुदास (चितरंजन) ने भी कदाचित् कहा था कि ''वकालत करते-करते हम बुड्ढे हो गए और इस बीच हमको बड़े-बड़े धोखेबाजों से भी साबिका पड़ा, किन्तु असहयोग आन्दोलन (गांधीजी का) में हमने जितने धोखेबाज आदमी देखे वैसे जिन्दगी भर में नहीं देखे थे।''

(बं.जी. पृ. 81)

महापुरुष भी मनुष्य होते हैं। अत: उनसे भूलें होना असम्भव या आश्चर्यजनक बात नहीं है। फिर भी यह सत्य है कि डॉ० अम्बेडकर में दलितों के उत्थान के साथ-साथ राष्ट्रहित की भावना थी। जबकि उनके नाम पर राजनीति करने वालों ने उनका एक पक्ष ही समाज के सामने रखा, जिससे नेता राजनैतिक लाभ तो ले गये, पर डॉ० साहब का दायरा संकुचित हो गया, वे राष्ट्र-पुरुष की जगह वर्गविशेष के वकील बना दिये गये। अपने लाभ के लिए किसी महापुरुष पर एकाधिकार जताना किसी भी दल या देश के हित में नहीं है। सभी के सामर्थ्य की अपनी सीमा होती है। अत: महापुरुषों की परस्पर तुलना करने से बचना चाहिये। यदि हम आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड की जगह खुले दिल से सभी महापुरुषों का सम्मान नहीं कर सकते, तो उनके प्रति घृणा से भी बचना चाहिये-

काश्मीरराज्यं ननु भारताङ्गं भवेद् विभक्तं नहि तत्कदाचित्।
बन्धे स्वदेहस्य बलिं ददानं, श्यामाप्रसादाख्य सुवीरमीडे॥
हीनेऽन्वये जात इह स्वकीयैर्गुणैर्महत् प्राप पदं य उच्चम्।
प्राज्ञो विपश्चिद् बुधमानकर्त्ता स्तुत्यो विधिज्ञाग्रणिभीमराव:॥

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक के सभी ग्राहकों से निवेदन

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुँच रही है। जिन **'आर्य प्रतिनिधि'** के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है, उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। **'आर्य प्रतिनिधि'** का वार्षिक शुल्क मात्र 200/- रुपये है।

अत: मेरी सभी **'आर्य प्रतिनिधि'** पाक्षिक के ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क शीघ्रातिशीघ्र भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्यसमाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक **'आर्य प्रतिनिधि'** के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आपका सहयोग हमें प्राप्त होगा।

व्यवस्थापक-**'आर्य प्रतिनिधि'** पाक्षिक,
दयानन्दमठ, रोहतक-124001

अमर हुतात्मा भक्त फूलसिंह जी

लेखक–श्रद्धेय स्वामी ओमानन्द महाराज

हैदराबाद रियासत के आर्य सत्याग्रह में हरयाणा प्रान्त ने जो भाग लिया वह भारत के सब प्रान्तों से बढ़कर था। उसका विशेष श्रेय पूज्य भक्त जी महाराज की कार्यकुशलता व प्रभाव को ही समझना चाहिए। इसीलिए सत्याग्रह की समाप्ति पर महाशय कृष्ण ने विनोद में कहा था–''जब भक्त फूलसिंह जैसे फ़रिश्ते आर्यसमाज में विद्यमान हैं, तब हमको जेल में कौन बन्द रख सकता है?''

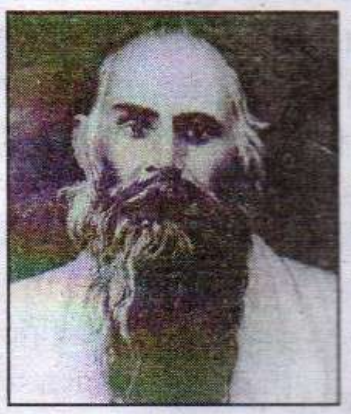

समस्त हरियाणे में जिस किसी दुखिया को कहीं भी शरण नहीं मिलती थी वह अन्त में भक्त जी महाराज की शरण में आता था और वे अपनी सारी शक्ति लगाकर उसके दुःख निवारण की चेष्टा करते थे। ऐसे ही दुःखीजनों में मोठ (जिला हिसार) के हरिजन बन्धु थे जिनका कुंआ मुसलमान रांघड़ों ने बनता-बनता बन्द करवा दिया था। मोठ के हरिजन भाई सब जगह से निराश होकर अन्त में भक्त जी की शरण में आये और अपनी कष्ट गाथा सुनाई। भक्त जी महाराज ने आश्वासन दिया कि कुछ दिन ठहरो भगवान् की कृपा से आपका सब मनोरथ पूरा हो जाएगा।

कुछ समय पश्चात् बिना किसी को सूचना दिए एक व्यक्ति के साथ 1 सितम्बर, 1940 को गांव मोठ में पहुँच गए। तीन दिन तक ग्रामवासियों को समझाते रहे किन्तु मुसलमान नहीं माने। अन्त में उन सब के सामने आमरण अनशन व्रत कर दिया–''अर्थात् कुंआ बनने पर ही अन्न ग्रहण करूँगा अन्यथा यहीं प्राण त्याग दूँगा।'' इसका भी मुसलमानों पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। और भक्त जी महाराज को तीन-चार दिन बाद वहाँ से उठाकर जंगल में ले जाकर अधमरा करके डाल आये। उस रात जो उन्हें यातनायें मुसलमानों द्वारा सहनी पड़ीं, वे वर्णनातीत हैं। ईश्वर की कृपा से अन्त में 23 दिन के उपवास के बाद समस्या हल हो गई। कुंआ की समाप्ति पर श्री भक्त जी महाराज को महात्मा गांधी जी से मिलने के लिए दिल्ली बुलाया और डेढ़ घण्टे तक वार्तालाप किया उस वार्तालाप में अपना अनुयायी बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया, परन्तु असफल रहे।

गांधी जी के कहने का मुख्य सार यही था–आप आर्यसमाज के दायरे से निकलकर मेरे प्रोग्राम के अनुसार कार्य कीजिए। समय-समय पर मैं भी आपको यथाशक्ति सहायता देता रहूँगा। इससे आप देश की अधिक सेवा कर सकेंगे।

भक्त जी महाराज ने छल-कपट रहित और सीधी-सादी भाषा में उत्तर दिया–महात्मा जी मैं आपकी सब आज्ञाओं को मानने के लिए तैयार हूँ परन्तु आर्यसमाज को नहीं छोड़ सकता, क्योंकि ''महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज तो मेरे रोम-रोम में रम चुके हैं, वे इस जन्म में तो निकाले से भी नहीं निकल सकते।'' जिस महात्मा जी को लोग जादूगर कहते थे उनका जादू दयानन्द के शिष्य पर असफल रहा।

भक्त जी का दृढ़ विश्वास था–''संसार का भला भगवान् दयानन्द जी के बताये हुए रास्ते पर चलने से ही हो सकता है। दुनिया में अगर सुख-शान्ति की वर्षा हो सकती है तो महर्षि दयानन्द के द्वारा दिखाए हुए सत्य-मार्ग पर चलने पर ही हो सकती है।''

उनके सर्वतोमुखी कार्यों में नारी जाति की उन्नति भी एक कार्य था। इसके लिए उन्होंने एक कन्या पाठशाला की स्थापना भी की, जो जींद में कई वर्षों तक चलती रही परन्तु वहाँ पर स्थिर न हो सकी। अन्त में गांव खानपुर कलां जिला सोनीपत में उसकी स्थिर नींव रखी जो बढ़कर कन्या गुरुकुल खानपुर कलां के नाम से विख्यात हुई। आज यूनिवर्सिटी के रूप में पूरे विश्व के लिए प्रेरणा बन गई है। इन सब कार्यों को देखते हुए सन् 1942 में श्रावण सुदी द्वितीया को रात के साढ़े नौ बजे मशरुफ गुण्डे चार मुसलमानों की गोली से वीरगति को प्राप्त हुए। इस प्रकार के त्यागी, कर्मनिष्ठ, तपोधन आर्यसमाज में भगवान् फिर से पैदा कर। श्री भक्त जी के यशोगान में उनके भक्त कुँवर जौहरी सिंह जी की एक प्रेरक रचना प्रस्तुत है– शेष पृष्ठ 16 पर....

ऋषि दयानन्द न आते तो... पृष्ठ 10 का शेष...

असम्भव नहीं था। यह निश्चय है कि आज देश जहां पर पहुंचा है और वैदिक तथा सनातनी पौराणिक लोगों की जो स्थिति व दशा है, वह वर्तमान जैसी न होकर वर्तमान से खराब व चिन्ताजनक होती। आज हिन्दुओं की जो जनसंख्या है इससे भी कहीं कम होती। देश आजाद होता या न होता, इस पर भी शंका उत्पन्न होती है। देश को आर्यसमाज द्वारा दिये स्वराज्य सर्वोपरि उत्तम होता का मन्त्र प्राप्त न होता। आर्यसमाज ने देश को जो स्वराज्य व स्वदेशीय शासन सर्वोपरि उत्तम होता है, इस विचारधारा के समर्थक विचारक, नेता, क्रान्तिकारी व आन्दोलनकारी दिए हैं वह न मिलते। इससे स्वतन्त्रता आन्दोलन में निश्चय ही शिथिलता होती और उसका प्रभाव देश की आजादी की प्राप्ति पर होता। एक साधारण परिवार में जन्म लेकर आज हम आर्यसमाज के कारण वेद, उपनिषद्, दर्शन, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत आदि का ज्ञान रखते हैं। हमने ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, वेदभाष्य सहित उनके अनेक जीवन चरित्रों एवं आर्य विद्वानों की सैकड़ों पुस्तकों को पढ़ा है। ऋषि दयानन्द के न आने पर न वह पुस्तकें होतीं, न वेद और उपनिषद् व दर्शन आदि ग्रन्थों पर भाष्य व टीकायें होतीं, तो उनका अध्ययन भी निश्चय ही असम्भव था। यह सब ऋषि दयानन्द जी की कृपा से सम्भव हुआ। हम आज जो भी हैं उसमें हम वेद व वैदिक साहित्य से परिचित हैं। इन्हीं से हमारा व्यक्तित्व बना है। हम व प्राय: सभी ऋषिभक्त ईश्वर व आत्मा के सत्यस्वरूप को जानते हैं। सन्ध्या, यज्ञ एवं उपासना आदि भी करते हैं। समाज हित व देश हित के कार्यों में भी भाग लेते व इन कार्यों को करने वालों का सहयोग व समर्थन करते हैं तथा देश विरोधी तत्त्वों के प्रति उपेक्षा एवं विरोध के भाव रखते हैं। हम ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज सहित आर्य विद्वानों के ग्रन्थों से विशेष अनुग्रहित एवं लाभान्वित हैं। उनका आभार मानते हैं।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक समाचार-पत्र की सदस्यता ग्रहण कर तथा धार्मिक एवं सामाजिक आयोजनों में 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' को सहयोग राशि भेजकर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में सहभागी बनिये।

सम्पर्क–मो० 08901387993

सम्पादकीय–वेद-प्रवचन पृष्ठ 2 का शेष....

अहिंसावृत्ति है। भेड़ियों और शेर-चीतों की मादाओं भद्रता या सद्भावना कैसे मिल सकती है? जो नगर प्रतिदिन के दैनिक कार्यक्रम का आरम्भ ही हजारों पशुओं की गर्दन पर छुरी फेरकर करते हों, उनकी सभ्यता मानवता की सभ्यता नहीं है। जब मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए हिंसा करता है तो उसका स्वभाव हिंसक हो जाता है और यदि समस्त समाज पशु संहार को 'हिंसा' की कोटि से निकालकर उपादेय समझने लगता है तो समस्त मानव समाज दानवता के रंग में रंग जाता है, अधर्म की ओर से घृणा जाती रहती है।

पशुपालन से मनुष्य को तो लाभ होता ही है, साथ ही पशुओं के विकास को भी सहायता मिलती है। मनुष्य के सम्पर्क में आने से पशुओं की पाशविक प्रवृत्तियाँ मृदु हो जाती हैं। गाय अपने बच्चे से भी प्रेम करती है और अपने स्वामी के बच्चों से भी। थोड़ा स्वामी की भक्ति करने लगता है। राणा प्रताप के चेतक या सिकन्दर के बोसीफौलस ने अपने स्वामियों के गुणों का कुछ न कुछ अंश तो अवश्य ही ग्रहण किया। स्काटलैण्ड के कुत्ते भेड़ों की भेड़ियों से रक्षा करना सीख जाते हैं। पञ्चतन्त्र की न्योले की कहानी प्रसिद्ध है। मनुष्य यदि मनुष्य बन जाए तो वह दानवों को भी मानव बना ले।

आदमी आदमी जो बन जाये।
कष्ट सारे जहाँ का मिट जाये॥

अमर हुतात्मा भक्त फूलसिंह जी... पृष्ठ 15 का शेष...

छोड़कर पटवार सबकी रिश्वत उल्टी फेर दी॥ टेक॥
धरती धन के ठोकर मारी, भरी जवानी याद है।
क्या तुझे भक्त फूलसिंह की, वो कहानी याद है॥ 1॥
उन्नीस सौ उन्नीस में जंगल में मंगल कर दिया,
भैंसवाल का गुरुकुल देखो, बस निशानी याद है।
क्या तुझे भक्त फूलसिंह की, वो कहानी याद है॥ 2॥
कितने ऐसे काम हैं जो अब बता सकता नहीं,
उजड़े घर को बसा गया, वो मेहरबानी याद है।
क्या तुझे भक्त फूलसिंह की, वो कहानी याद है॥ 3॥
पारसमणि गई भूल में, बड़ी खुशबू टूटे फूल में,
'जौहरीसिंह' अमर होगये, गीता की बानी याद है।
क्या तुझे भक्त फूलसिंह की, वो कहानी याद है॥ 4॥

[साभार-दयानन्द सन्देश, अगस्त, 2023]

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के यशस्वी मन्त्री श्री उमेद शर्मा जी आर्यसमाज रेलवे रोड जीन्द जंक्शन में पहुँचकर सभा को सम्बोधित करते हुए।

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के यशस्वी मन्त्री श्री उमेद शर्मा जी का आर्यसमाज रेलवे रोड जीन्द जंक्शन में पहुँचने पर भव्य स्वागत किया गया। सभा के भजनोपदेशक पं० रामनिवास आर्य, आचार्य सूर्यदेव आदि गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे।

यज्ञ हेतु दान देकर पुण्य के भागी बनें

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा में प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ किया जाता है और पर्यावरण की शुद्धि के लिए रोहतक जिले के सरकारी, गैर-सरकारी विद्यालयों और गाँव-गाँव में यज्ञ व वेदप्रचार का आयोजन किया जाता है। इस महायज्ञ में आप लोग अपने बच्चों के जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ व अन्य उपलक्ष्यों पर दान देकर पुण्य के भागी बनें। संस्था सदैव आपकी आभारी रहेगी।

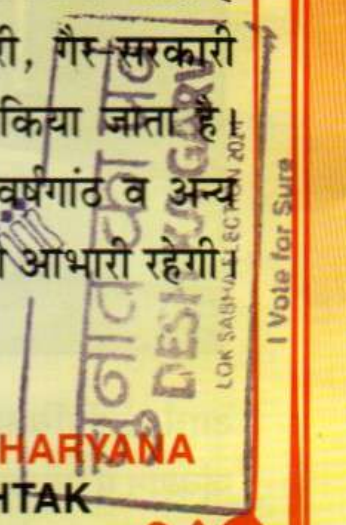

यज्ञ हेतु बैंक खाता

ACCOUNT NAME - ARYA PRATINIDHI SABHA HARYANA
BANK NAME - PNB JHAJJAR ROAD ROHTAK
Account No. 0406000100426205
IFSC - PUNB0040600
MICR - 124024002

श्री .....

पता .....

.....

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा